कवि: गोपीनाथ

उंच उंच डोंगर भवतीं। चढले नील नभांत
भरभर बारा व्यापुनियां। ताकी सारा प्रांत। १

तस्वीरीयी फुललेल्या। त्या शोन्यांत सुरंख
शृङ्खलें वाहं निलंशरिणी। स्फटिकावाणी एक। २

तांच कुणी चपछाईतः। डोंगर वंधून धोर
करवंदे विकण्यासाठी। ये भिल्लाचा पोर। ३

शालिग्रामसम काठा। देह कसा धोरीव
तेजदार नागावाणी। दिसे कोवठा जीव। ४

स्वच्छ गोल डोंग्यांत नसे। भोलीचा लबलश
साघा भोटा भाव मुखी। आणि दिसे आवेश। ५

ओठ चिमुकले चिलग जरा। होती मधून मधून
शुभ हिरकण्यांसम दिसती। दंत किती शोभनं। ६

एक कारी घेवणे परशु। दुस्स्मया हारीं ग्रोण
" करवंदे व्या करवंदे"। सांगतसे गर्जून। ७

असेल याची परंसुती। जवठच रम्य निवान्त
मातापितरांसह तेथे। रहात हा सौख्यांत। ८

स्वातंत्र्याचा खराबुरा। शाहिर अहि हाच
नागरस्तीचा नाहीं। या जीवाला जाच। ९

पक्ष्यांची एकत गणां। देत तयांना ताल
हिंडावं रानोरानी। आनंदांत खुशाल। १०
भाट सोडफणी कर्कूंच ये। गाडी निघुणी हूँर 
परि न हले डोळ्यापुडफणी। तो भिल्लाचा पोर. ??

वाक्युभा